सभ खे रुआरे, मोहे माया मोहिणी,
भवाए भव-सिंध में, नाना रूप धारे,
सामी बचो को सूरिमो, सतिगुरू संभारे,
बेहदि ड्रिओ ब्रारे, पूरनु ड्रिठो जंहिं पीअ खे.

माया के प्रभाव का वर्णन करते हुए सामी साहब कहते हैं कि माया मोहिनी जो सभी मनुष्यों को मोह कर रुलाती रहती है। माया नाना रूप धारण कर मनुष्यों को संसार रूपी सागर में भटकाती रहती है। संसार में विरला कोई वीर मनुष्य होगा, जिसने सतगुरु का स्मरण कर, सतगुरु से अंतर्ज्ञान प्राप्त कर, अनंत का दीप जला कर प्रियतम परमात्मा के दर्शन किये होंगे।

जो नहीं है, जिसका यथार्थ अस्तित्व नहीं है, वह 'माया' है। जगत् की उत्पत्ति का विचार करते समय माया की कल्पना करनी पड़ती है। अद्वैत का बोध कराने के लिए माया को स्वीकार किया गया है। केवल माया से जगत् नहीं हो सकता, इसलिए मानना पड़ता है कि माया ब्रह्म के आश्रय में होती है। जीवात्मा रूप में ब्रह्म होते हुए भी उसे अपने सच्चे/यथार्थ स्वरूप का ज्ञान नहीं होता और वह स्वयं को परमेश्वर से अलग मानने लगता है। यह जिसके कारण होता है, वह माया है। माया की 'आवरण' और 'विक्षेप' नामक दो शक्तियाँ होती हैं। 'आवरण' शक्ति के कारण जीव स्वयं को परमात्मा से अलग/निराला मानता है। माया को ही अविद्या, अज्ञान, प्रकृति और प्रधान शक्ति कहा गया है। ब्रह्मविद्या से माया नष्ट हो जाती है। स्वामी विवेकानंद जी के शब्दों में 'माया प्रकृति है, माया जीवन और मृत्यु है। माया अच्छे और बुरे, ज्ञान और अज्ञान का मिश्रण है। हम जिसमें बाँधे जाते हैं, वह माया है।' संत कबीर ने माया को 'ठगनी' कहा है, जो सभी मनुष्यों को ठगती रहती है।

माया तो ठगनी भई, ठगत फिरै सब देस।
जा ठग ने ठगनी लगी, ता ठग को आदेस।।

सामी साहब ने भी अनेक रूप धारण करने वाली इस माया को 'मोहिणी' अर्थात् मोहिनी कहा है, जो मनुष्यों को मोहित कर, जीवों को भवसागर में भटकाती रहती है। जीव को असंख्य योनियों में, जन्मों में भटकना पड़ता है। उसे मुक्ति नहीं मिलती । किन्तु मनुष्य-देह मिलने पर जीव को मुक्ति मिल सकती है। माया का आवरण हटा कर परमेश्वर को पा सकता है। आवश्यक है अपने भीतर के अज्ञान के अंधकार को दूर करना।

कबीर माया मोहिनी, सब जग घाला घानि।
कोइ इक साधु ऊबरा, तोड़ी कुल की कानि।।

■